REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 3 | DECEMBER - 2018

समकालीन हिन्दी महिला दलित कहानियों के प्रतिमान

डॉ. सुरजीत कौर
हिन्दी विभागाध्यक्ष , ख़ालसा कॉलेज, अमृतसर .

प्रस्तावना :

'दलित स्त्री लेखन दलित चिंतन का वाहक है यह चिन्तन दलित आंदोलन के संर्घष के साथ–साथ विकसित हुआ है। दलित स्त्री का चिंतन बुद्ध, जोतिबा फुले, सावित्री फुले, पेरियार और डा० अम्बेदकर के दर्शन से प्रेरित हो कर अस्तित्व में आया है। दलित स्त्री लेखन समाज की कड़ी सच्चाईयों और विसंगतियों को रौंद कर आगे आ रहा है। दलित लेखिकाएँ समाजिक समस्याओं के विरूद्ध लड़ने के पक्ष पर उतनी ही प्रतिबद्ध और सजग हैं जितनी अपने सृजनात्मक लेखन के पक्ष पर गंभीर हैं। हर समय काल की सीमा से पार जाकर उन्होंने अपनी भूमिका को समझा है। बुद्धकालीन थेरियों ने 'थेरी गाथाओं' में स्त्री स्वातंत्र्य का स्वर उद्घोष किया तो 19 वीं शताब्दी में पंडिता रमाबाई, ताराबाई शिंदे और सावित्री बाई फुले, मुक्ताबाई ने उस स्वर को मजबूती दी । जातीय उत्पीड़न, स्त्री–दमन, धार्मिक अन्धविश्वास की जड़ों को खत्म करने के लिए उन्होंने धार्मिक ग्रन्थों और पुरोहितों की साज़िश का पर्दाफ़ाश किया। सावित्री बाई फुले, ताराबाई शिंदे, मुक्ताबाई ने तत्कालीन समाज में प्रगतिशील विचारों से ओत–प्रोत अपने लेखों, कविताओं और निबंधों में समाज के दुख दर्द विशेषतः स्त्रियों के दर्द तथा भेदभावों को इंगित किया था।' [1]

हिन्दी में डॉ सुशील टांकभौरे, रजत रानी मीनू, तारा परमार, डॉ कुसुम मैंघवाल, रजनी तिलक, पुष्पा भारती, उर्मिला पवार, नीरा परमार आदि ने दलित महिला लेखन द्वारा दलित स्त्रियों की वेदना को अपनी कहानियों के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है। साक्षरता एवं साहित्य अपने–आप में ही एक सशक्त माध्यम है, जो किसी भी व्यक्ति को संर्घष के लिए तर्कपूर्ण एवं प्रभावशाली मंच प्रदान करता है। जहाँ दलित पुरुषों ने इसमें दलित संघर्ष को तीखा करने की सम्भावनाएं तलाशी हैं वहीं दलित महिला साहित्यकारों ने इससे दो कदम आगे बढकर स्त्री के 'दलित' और 'स्त्री होने' की दोहरी पीड़ा को अभिव्यक्ति दी है। हिन्दी की दलित महिला कथाकारों ने अपने लेखन के द्वारा पूर्व प्रचलित प्रतिमानों के साथ–साथ कुछ नए व प्रांसगिक प्रतिमानों की भी स्थापना की । जहाँ इन्होंने जीवन की समकालीन समस्याओं और दलित–वर्ग की पीड़ा को अपने लेखन का आधार बनाया वहीं इन्होंने दलित महिला जीवन के सरोकारों को भी उजागर किया। दलित महिला लेखिकाओं की कहानियों में मूल भाव संघर्ष से जूझते मानस का है। इनके द्वारा जहाँ इस संर्घष से जुड़े कारणों का विश्लेषण किया गया है वहीं इसकी विडम्बना तथा विरोधाभासों को भी सामने रखा गया। अनीता भारती की कहानी 'एक थी कोटे वाली' में लेखिका ने जहाँ शिक्षा को एक हथियार के रूप में दिखाया है वही शैक्षिक संस्थानों में जातिगत–विभाजन की तीव्रता पर भी प्रकाश डाला है। इन्ट्रव्यु में पूछे गए प्रश्न का उत्तर देती हुई गीता कहती है, 'मुझे लगता है शिक्षा पावर की सीढ़ी है शिक्षा के बिना मनुष्य पशु समान है, शिक्षा से पद और पद से पावर का अद्भुत रिश्ता है।' [2]

इन कहानियों में आधुनिक व्यवस्था और कानून–प्रबन्धन को भी आंका गया है। जहाँ एक ओर कानून व नीति–विधान में दलित–वर्ग के लिए सामाजिक आरक्षण, छुआछूत विरोधी कानून इत्यादि द्वारा न्याय व सुरक्षा का प्रबन्ध किया गया है वहीं इन सब की व्यावहारिकता पर भी प्रश्न उठाए गए हैं।, 'सरकारी कागज में

डोम–चमारों की दुनिया कितनी सुधर गई थी लेकिन आज भी कोई उनकी बस्ती के लोगों को अपने आसपास फटकने देना नहीं चाहता था। उनके कुएँ, तलाब, या नल के पास जाते ही पीढ़ियों को प्रतिहिंसा सर्र से आँखों में लपलपा उठती।' [3]

इन कहानियों में कानून को संघर्ष के एक माध्यम के रूप में भी देखा गया है। परन्तु कानूनी लडाई के द्वारा न्याय प्राप्ति तभी सम्भव है अगर कानून भी न्यायपूर्ण हो। उर्मिला पवार की कहानी 'औरतजात' कहानी में लेखिका ने यह दर्शाया है कि कैसे कानूनी प्रावधान के अभाव में अपने पति के खिलाफ औरत न्याय पाने में असफल होती है। पुरूष प्रधान व्यवस्था में न केवल कानूनों को इस ढंग से निर्मित किया जाता है कि वह पुरूषों को बालादस्ती प्रदान करते हैं इसके अलावा पुरूष मौजूदा परम्पराओं व कानूनों को अपने लिए इस्तेमाल करना बाख़ूबी जानता है। रजत रानी 'मीनू' की कहानी 'धोखा' कहानी में पति अपनी पत्नी को तलाक देने से इन्कार कर देता है क्योंकि उनका विवाह हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन नहीं होता । सहजीवन का चुनाव करने वाली श्रुति की मम्मी कहती है कि ' मैंने कोर्ट में अपने हक की अपील की । केस लड़ा। तमाम सबूत और प्रमाणों के आधार पर उन्हें ही न्याय मिला। 'हिन्दू विवाह अधिनियम' के तहत हमारी शादी अवैध थी। इसलिए गुजारा भता की बात तो छोड़ो तलाक का तो प्रश्न ही नहीं उठा। मैं ठगी सी महसूस कर रही थी अपने आप को। हम दोनों की परिस्थितियों ने ऐसे मोड पर ला कर खड़ा कर दिया था, मानो हम कभी मिले ही नहीं थे। मुझे एक झटके में अलग कर दिया था। मानो मुझ से कभी कोई दिली या भावनात्मक रिश्ता रहा ही नहीं था। मुझ पर लोगों ने अशोभनीय शब्दों की बौछार की। मुझे रखैल आदि जाने क्या क्या अपशब्दों से नवाजा। वह दूसरी औरत उनकी पत्नी थी और मैं पता नहीं! क्या जहर के घूट पी कर मैंने जीवन को जीया है। जिस सम्मान के लिए अपने माता–पिता से विद्रोह किया, उनका घर छोड़ा इससे तो मैं पितृसता की लडाई पहले लडती। प्रगतिशील, उन्नत विचारों के लिए आज मैं मजाक बन कर रह गई, और मजाक बन गए मेरे विचार।' [4]

लगभग इन सभी कहानियों में आधुनिक भारत के परिवर्तनोमुखी समाज के विभिन्न पक्षों का वर्णन और चिन्तन किया गया है। यह परिर्वतन परम्परागत समाज की आधुनिक समाज की ओर एक सामान्य प्रक्रिया भी हो सकती है। इन कहानियों में शोषित वर्ग (विशेषतः दलित व स्त्री वर्ग) की परिस्थितियों तथा मानसिकता में आ रहे बदलाव के सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्षों पर भी चिन्तन किया गया है। इसके अतिरिक्त यह एक जटिल प्रक्रिया भी हो सकती है जिस के अन्तर्गत बाह्य और अन्तर्मुखी तत्व संलग्न हों रजनी दिसोदिया की कहानी 'चारपाई' कहानी इस पविर्तन की बहुआयामी तस्वीर प्रस्तुत करती है। इस कहानी में एक ऐसे दलित परिवार की कथा है जो न केवल पढ़ लिख कर बेहतर आर्थिक स्थिति में आया है बल्कि वह देहात से आकर नगर में बसा है। लिहाज़ा उसमें रूतबे के परिर्वतन के साथ–साथ परिवेशगत परिर्वतन भी आया है। परिवार के बुर्जुग के द्वारा परम्परागत जीवन–शैली का आधुनिक जीवन–शैली के साथ निरन्तर संर्घष दर्शाया गया है। परिवार के दादा की चारपाई जीर्ण शीर्ण अवस्था में होते हुए भी, परिवार के चाहते, न चाहते हुए भी उसके जीवन का अनन्य हिस्सा बनी हुई है। रूतबे में उन्नति हासिल किए उसका बेटा, जो आधुनिक जीवन–शैली के द्वारा अपने को उच्च–वर्ग मैं दर्ज करवाना चाहता है। वह अपने पिता की जीवन–शैली को दलित परिवेशगत मानते हुए उसका विरोध करता है जबकि उसका पिता आधुनिक जीवन शैली में अपने आप को असुरक्षित व परिवार के हाशिये में पाता है। आधुनिकता और परम्परा के इस टकराव में अगर कोई समन्वय का सेतु दिखता है तो वह घर की मालकिन विद्या की भूमिका में है जो मानव–मन की गहराइयों में छिपे उस शाश्वत भाव जगत को समझने–समझाने का प्रयास करती है जो प्रत्येक परिवेश में मानव–जीवन की आधारशिला बनता है। 'पता नहीं क्या बताना चाहते हैं इस चारपाई से चिपटे रहकर।' ' वे माँ को भूल नहीं पाते ।' विद्या ने समझाने की गरज से कहा। ' माँ तो कमरे में है।' ओमप्रकाश ने चिढ़ कर कहा। उन का इशारा उस बड़ी तस्वीर की ओर था जिसे उन्होंने माँ की मृत्यु के बाद पिता जी के लिए ही बनवाया और उन्हीं के कमरे में लगा दिया। 'वो माँ की तस्वीर है, चारपाई में माँ खुद मौजूद है।' विद्या का आर्द्र स्वर जैसे ही बाहर आया, घर के बाहर जोर से बिजली चमकी और खिड़की इतनी रोशनी अंदर फेंक गई कि एक बार घर के अंदर का सारा अंधेरा दूर हो गया।' [5]

परिर्वतन की इस प्रक्रिया में बाहरी और भीतरी चुनौतियां रहती हैं । अनीता भारती की कहानी 'एक थी कोटे वाली' कहानी में यह बात सामने आई है कि दलित–वर्ग के विकास के बाद भी उच्च श्रेणी उन्हें स्वीकारने

की उदारता नहीं दिखा पाई। दलित–वर्ग के विकास और उनके दावा करने के अधिकार से उच्च–वर्ग के अहम को ठेस लगती है। यहाँ यह बात सामने आती है कि रूढ़िवादिता से दलित–वर्ग तो मुक्ति पा सकता है लेकिन सम्पूर्ण परिर्वतन के लिए उच्च–वर्ग का मुक्ति पाना भी आवश्यक है । उच्च–वर्ग रूढ़ियों से मुक्ति पाना नहीं चाहता क्योंकि एक तो वह रूढ़ियों को अपना वर्चस्व बनाए रखने में इस्तेमाल करता है दूसरा वह रूढ़ियों के द्वारा अपने निहित स्वार्थ की पूर्ति करता है। नीरा परमार की कहानी 'वैतरणी' कहानी में यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कैसे मिथक और रूढ़ि के नाम के अधीन एक लोकतांत्रिक प्रतिनिधि भी लोगों को विशेषतः शोषित वर्ग को सहज ही अनदेखा कर देता है। रूढ़ियां वर्चस्व और प्रभुत्व को इस हद तक स्थापित करती हैं कि खुद शोषित भी स्वेच्छा से ही अपने आप को शोषणकारी को समर्पित कर देता है। कुमुद पावड़े की कहानी 'सावित्री व्रत का समापन' में 'अम्मा जी' उस पति को अगले जन्म में भी पाने के लिए व्रत रखती हैं, जिसने इस जन्म में उसे कोई आदर व प्यार नहीं दिया। इन कहानियों ने अगर वर्चस्व के प्रभाव को दर्शाया है तो वहीं इन्होंने रूढ़िग्रस्त वर्चस्व को तोड़ने के नए प्रतिमान भी स्थापित किये हैं। कुमुद पावड़े की कहानी 'सावित्री व्रत का समापन' में अम्मा जी का व्रत तोड़ने के लिए तैयार हो जाना इसी वर्चस्व को तोड़ने की ओर इशारा है। 'मतलब मैं यही कहना चाहती हूँ कि अगले जन्म मैं पुनः आप दोनों के होंगे वे और फिर यही उपेक्षा–प्रताड़नाओं का सिलसिला आपके भाग में जुड़ जाएगा। क्या यह सब रास आएगा आपको ? इस जन्म में तो गृहस्थी उजड़ ही गई, उससे आप को संतोष नहीं हुआ क्या ? आखिर यह सब किस लिए'– मैं झल्ला उठी। मेरा यह झल्लाना उनके दिल को दहला गया होगा। सुन्न हो कर मेरी ओर एकटक देखते समय उनकी नजरों में एक बदलाव की झलक मिली, और मुझे मौका मिल गया –' अम्मा जी, औरत जात भी तो एक इंसान है। मर्दों ने उनसे अपने मन मुताबिक दबाव डालने, उपेक्षा कर फेंक देने के लिए औरत कोई चींटी–मक्खी थोड़े ही है ?' सच कह रही हो बहू' अम्मा जी का यह वाक्य मुझे बदलाव का सकेंत दे गया। [6]

अनीता भारती की कहानी 'एक थी कोटे वाली' कहानी में वह न केवल उस वर्चस्व को तोडती है बल्कि उच्च वर्ग की रूढ़िग्रस्त संकीर्ण धारणाओं को भी तार–तार करती है। 'ये क्या तुमने जात–पात की बातें लगाा रखी हैं ? क्या तुम शिक्षक कहलाने लायक हो ? पूरा द्रोणाचार्य तुम्हारे मन में बैठा है।' ' तुम सिर्फ तीन प्रतिशत हो और हम पर राज कर रहे हो। अब इस राज के जमाने लद गए।' ' हम पूरी मेंहनत करते हैं, हमसे टक्कर लेकर दिखाओ।' ' एकलव्य का अँगूठा तुमने छल से काटा, हमे छल कर दिखाओ।' ' एक बार हमारी जगह पैदा हो कर हमारे जितना बनकर दिखाओ।'[7]

रूढ़ियों के प्रभुत्व के अलावा पुरूष सतात्मकता से भी स्त्री पात्र लोहा लेती है। उर्मिला पवार की कहानी 'औरतजात' में लेखिका ने पुरूष–सता का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया है कि कैसे पुरूष प्रधान सामाजिक व्यवस्था में पुरूष द्वारा दो शादियां करना भी औरत द्वारा औरत के अधिकारों को मारना है। जबकि पुरूष द्वारा दोनों ही शोषित होती हैं इस कहानी में यह खूबसूरती से स्पष्ट किया गया है कि कैसे एक पढ़ी–लिखी युवती तथा अनपढ़ सौतेली माँ इस पुरूष सरंचना के विरोध में एकजुट हो जाती हैं। 'तारा तुम पढ़ी लिखी हो नौकरी करती हो। सो तुम पति को कोर्ट में खींच सकती हो। मैंने और तुम्हारी माँ ने क्या किया ? मैं बाप की उम्र के आदमी की बीवी बनी। उस वक्त मुझ पर क्या बीती होगी ? इसका तुम्हें आज भी ख्याल नहीं है। तुमने कहा था कि सोनाबाड़ी की औरतें हँसते–खेलते घरों में आग लगाती हैं, लेकिन तारा, आग औरतें नहीं लगातीं। आग लगाते हैं आदमी। अपनी बच्चियों को किसी के हाथों बेच देते हैं और किसी की नन्ही बच्ची को भी ब्याह लाते हैं। यह सब बन्द होना चाहिए। तारा जो तुम आज कर रही हो वह मैं भी करना चाहती थी। शौंकिया दो–दो शादी रचाने वालों को सबक सिखाने के लिए कुछ करना चाहिए, ऐसा मुझे भी लगता था। पर मैं ठहरी अनपढ़ गँवार। लेकिन तुम कर सकती हो, इसलिए मुझे तुम पर नाज है। [8]

इन कहानियों में केवल दलित महिला द्वारा प्रतिक्रियात्मक प्रतिमान स्थापित नहीं किए गये अपितु बाज़ार के पूँजीवादी वर्चस्व के विरोध में एक दलित मजदूर के अन्दर कसमसाते बोध को भी अभिव्यक्त किया गया है। पुष्पा भारती की कहानी 'जूता' में जूता बनाने वाले के सपनों को विचौलिए के द्वारा कुचले जाने के अहसास में भावी बगावत की कोंपलें फूटती दिखाई गई हैं।

परिवर्तनोमुखी समाज के एक विलक्षण पहलू की तरफ संकेत करती है रजनी दिसोदिया की कहानी 'चारपाई'। जब टी० वी० के बन्द होने की सूरत में सारा परिवार एक एक करके दादा जी की चारपाई के गिर्द इक्टठा हो जाता है और कौतुहलपूर्वक दादा जी की विनोदपूर्ण लोक कथाओं का आनन्द लेने लगता है। यह

वह समय है जब दो पीढ़ियों के बीच का अन्तर सहज ही मिट जाता है। बच्चे दादा जी के सहज तर्क से प्रभावित होते हैं और दादा जी को परिवार में पुनः केन्द्रिय भूमिका प्राप्त हो जाती है। कहानी की लेखिका बिना किसी विशेष टिप्पणी के हमारे समाज की इस त्रासदी को उजागर कर जाती है कि कैसे टी० वी० एवं कम्पयूटर इत्यादि संचार उपकरण हमारे पारिवारिक सम्बन्धों में शुष्कता का कारण बनते हुए पीढ़िगत अन्तर को बढाते हैं।

इस प्रकार महिला दलित लेखिकाओं ने अपने कहानी–संसार द्वारा नवीन प्रतिमानों को स्थापित करते हुए यह निष्कर्ष निकाला है कि भील, सांखी, चूड़ा, चमार, भंगी, इस देश के मूल निवासी हैं जिनकी अपनी वैभवशाली संस्कृति और सभ्यता थी किन्तु हिन्दू आक्रमणकारियों ने इन मूल निवासियों को हटाकर उनको अपना दास बना लिया है। उनके इतिहास और संस्कृति को तहस नहस कर दिया और उनके धर्म जोकि आदिधर्म था के ऊपर अपने धर्म को थोप दिया इसलिए मूल निवासियों को अपनी मूलता की गौरवशाली स्थिति को दोबारा हासिल करने के लिए एकजुट होकर सर्घष करना चाहिए। दूसरा महिला–वर्ग को दोहरी लड़ाई में संगठित होना होगा और वह दोहरी लड़ाई है – दलित होने की और स्त्री होने की।

संदर्भ – ग्रंथ सूची

1 समकालीन भारतीय दलित महिला लेखनः संपादक रजनी तिलक, रजनी अनुरागी, स्वराज प्रकाशन नई दिल्ली, 2011
2 'समकालीन नारीवाद और दलित स्त्री का प्रतिरोध' स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013
3 समकालीन दलित कहानी : कुछ वैचारिक बिन्दू' (कहानी विशेषांक), टेकचन्द मार्च 2016
4 हम कौन हैं, (कहानी संग्रह) रजत रानी 'मीनू', वाणी प्रकाशन, 2012
5 समकालीन दलित कहानी : कुछ वैचारिक बिन्दू' (कहानी विशेषांक), टेकचन्द, मार्च 2016
6 समकालीन भारतीय दलित महिला लेखनः संपादक रजनी तिलक, रजनी अनुरागी, स्वराज प्रकाशन नई दिल्ली, 2011
7 'समकालीन नारीवाद और दलित स्त्री का प्रतिरोध', स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013
8 'समकालीन नारीवाद और दलित स्त्री का प्रतिरोध' स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013